उदय प्रकाश

जन्म	:	**1 जनवरी 1952 ।**
जन्म-स्थान	:	**सीतापुर, अनूपपुर, मध्य प्रदेश ।**
माता-पिता	:	**गंगा देवी एवं प्रेम कुमार सिंह ।**
शिक्षा	:	**बी० एससी०; एम० ए० (हिंदी), सागर विश्वविद्यालय, सागर, मध्य प्रदेश ।**
वृत्ति	:	**जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली के भारतीय भाषा विभाग में कुछ समय तक अध्यापन । संस्कृति विभाग, मध्य प्रदेश सरकार में विशेष कर्त्तव्यस्थ अधिकारी । 'दिनमान' के संपादन विभाग में कार्य । 'संडेमेल' (नई दिल्ली) में सहायक संपादक । प्रेस ट्रस्ट ऑफ इंडिया के टेलीविजन विभाग में विचार और पटकथा प्रमुख । टाइम्स रिसर्च फाउंडेशन में पत्रकारिता का अध्यापन । अंग्रेजी पत्रिका 'एमिनेंस' का संपादन, आदि ।**
संप्रति	:	**स्वतंत्र लेखन । फिल्म निर्माण, अखबारों तथा फिल्मों के लिए लेखन ।**
कृतियाँ	:	**दरियाई घोड़ा, तिरिछ, और अंत में प्रार्थना, पॉल गोमरा का स्कूटर, पीली छतरी वाली लड़की, दत्तात्रेय के दुख, अरेबा-परेबा, मोहनदास, मेंगोसिल – कहानी । सुनो कारीगर, अबूतर-कबूतर, रात में हारमोनियम – कविता संग्रह । ईश्वर की आँख (निबंध-आलोचना) । कला-अनुभव, इंदिरा गाँधी की आखिरी लड़ाई, लाल घास पर नीले घोड़े, रोम्याँ रोलाँ का भारत – अनुवाद ।**
फिल्म–टी0वी0	:	**अनेक धारावाहिकों और टी0 वी0 फिल्मों के स्क्रिप्ट लिखे । यह कार्य जारी है ।**

उदय प्रकाश के लेखन का यह तीसरा दशक चल रहा है । पिछले दो दशकों में समसामयिक हिंदी लेखन में उन्होंने एक अग्रणी एवं महत्त्वपूर्ण लेखक की छवि और पहचान अर्जित की है । 1980 के आसपास वे एक कवि के रूप में पाठकों के समक्ष उदित हुए थे । अपने विषय-चयन, सीधी संबोधित भाषा, ताजगी भरे मुहावरे और अनौपचारिक संवेदना के कारण उन्होंने कविताओं द्वारा सुधीजनों को आकृष्ट किया था; नए पाठकों में अपने प्रति और नई रचनाशीलता के प्रति, गरमाहट भरी उत्सुकता पैदा की थी । कत्रिता के क्षेत्र में उनका कार्य चलता रहा और इसी बीच उन्होंने कहानी विधा पर अपना ध्यान केंद्रित किया ।

तत्सामयिक कहानी की हालत न केवल अच्छी नहीं थी, बल्कि बुरी और चिंताजनक थी । तरह-तरह के आंदोलनात्मक नारों-आह्वानों और गैर रचनात्मक छद्म वैचारिक अभियानों के बीच वह बदहाली में पड़ी हुई थी । तथाकथित कहानियाँ खूब छपती थीं, किंतु उनका पाठकों से संवाद नहीं दिखाई पड़ता था । प्राय: वे कृत्रिम और स्थूल थीं । उनकी हालत कुपोषण के शिकार उन बच्चों जैसी थी जिनके हाथ-पैर पतले और हड़ियल पड़ गए हों तथा पेट असाधारण रूप से बड़ा हो गया हो । वे तथ्य और कथ्य दोनों ही धरातलों पर रक्ताल्पता से ग्रसित दिखाई पड़ती थीं । साठोत्तरी पीढ़ी के कहानीकारों की पकड़ ढीली पड़ चुकी थी, समांतर आदि आंदोलनों से जुड़े पिछली पीढ़ी के कथाकार अपने को

लगातार दुहराए जा रहे थे । उनके अनुभव फीके पड़ चुके थे जैसे रोशनाई में काफी पानी पड़ चुका हो । निश्चय ही दो-एक अपवाद थे, किंतु उनपर समूची आशा टिकाई न जा सकती थी । समसामयिक अनुभव और यथार्थ जो उत्तरोत्तर जटिल पड़ते गए थे, उनकी गहरी प्रतीति से उपजे शिल्प और भाषा की दरकार थी, जो लेखक और पाठक दोनों को झिंझोड़ सके; जड़ता और उदासीनता को तोड़ सके । ऐसे समय में कविदृष्टि संपन्न कुछ कथाकार, जिनमें कुछ पुरानी पीढ़ी के भी थे, सामने आए । उन्होंने कहानी पर ध्यान केंद्रित किया । उसे गंभीरता से लिया और ऐसी नई रचनाएँ दीं जिनसे परिदृश्य धीरे-धीरे बदल चला । ऐसे कथाकारों में उदय प्रकाश अग्रणी और महत्त्वपूर्ण हैं। वे तब से लगातार समसामयिक रचनाशीलता में अपनी कद्दावर भागीदारी निभाते आ रहे हैं । कविता, कहानी, निबंध, लेख-टिप्पणियाँ, आलोचना और टेलीविजन फिल्म आदि के लिए स्क्रिप्ट लेखन–तमाम क्षेत्रों में उन्होंने नित्य नवीन प्रयोग किए । ऐसे प्रयोग, जिनसे कहानी का फॉर्म बदल गया और वह सचमुच दो-एक प्रधान साहित्यरूपों में शुमार होकर विशेष सार्थकता अर्जित कर सकी ।

पिछले बीस वर्षों में लिखी गई श्रेष्ठ हिंदी कहानियों की अगर सूची बनाई जाए तो उसमें आधी से ज्यादा कहानियाँ उदय की होंगी । कथ्य-शिल्प-भाषा आदि सभी दृष्टियों से । उदय प्रकाश की कहानियों का यह असर हुआ कि बड़े पैमाने पर अपनी तथाकथित रचनाओं से ऊब पैदा करनेवाले, फार्मूलाबद्ध लेखन करनेवाले और गैररचनात्मक कारणों से अपनी चर्चा करवानेवाले लेखकों की भीड़ छँट चली । एक स्वस्थ रचनात्मक माहौल बना और हिंदी कहानी का विकास दृष्टिगोचर हुआ; उसकी दशा-दिशा उजागर हो चली । एक सही, प्रतिभाशाली और अंतर्निष्ठा से परिपूर्ण क्रियाशील लेखक के उठ खड़े होने का अर्थ उदय प्रकाश के रचनात्मक विकास पर नजर डालते ही स्पष्ट हो जाता है । आजीविका और वृत्ति की दृष्टि से लगातार अनिश्चय, स्वास्थ्य के लिहाज से लगातार बदहाली झेलते हुए इस संघर्षशील कवि-कथाकार ने अद्भुत जीवट से भरी सर्जनशीलता दिखाई है ।

उदय प्रकाश के यहाँ अनुभव और उसके अनुरूप अभिव्यक्ति के लिए कथाशिल्प का कभी टोटा नहीं पड़ा । वे कभी खुद को दुहराते नहीं । सामयिक यथार्थ को गहरे इतिहासबोध के साथ उसकी पूरी तल्खी, क्रूरता और भयानकता के साथ तदनुरूप शिल्प और भाषा में बयान करते हैं । उनके अनुभव में खासा वैविध्य है । गाँव और शहर, मध्यवर्ग और निम्न वर्ग आदि के परंपरागत विभाजन उनके यहाँ अप्रासंगिक हो चुके हैं । उनका अनुभववृत्त, उनकी कथाभूमि, उनकी रचनादृष्टि लगातार बड़ी, बेधक और गहन होती जाती है । वे कारीगर और कलाकार एक साथ हैं, ऐसा कारीगर और कलाकार, जिसके आगे काम का टोटा नहीं, अंबार है; जिसपर उसे अभी तुरंत भिड़ जाना है । कभी पीछे मुड़कर न देखता हुआ एक अशांत, असंतुष्ट और विक्षुब्ध कलाकार जिसके आगे तथ्य और कथ्य का विपुल विस्तार लिए ठाठें मारता संसार चुनौतियाँ देता अपनी ओर खींच रहा है ।

यहाँ प्रस्तुत उनकी प्रसिद्ध कहानी 'तिरिछ' एक उत्तर आधुनिक त्रासदी है । आज के युग में समय बहुत दूर तक वैश्विक और सार्वभौम हो चुका है । विकास की दृष्टि से दुनिया के देशों का चाहे अब भी विभाजन किया जा सकता हो, पर कहीं ऐसे विभाजन अप्रासंगिक भी हो चुके हैं । ऐसे में भारत जैसे देश में यथार्थ और समय के बीच बहुसंख्यक समाज के लिए एक ऐसी अलंघ्य खाई उभरी है जिसके चलते जीवन में बेगानगी और अजनबियत आई है । कहानी नई पीढ़ी के प्रतिनिधि बेटे के दृष्टिकोण से लिखी गई है और बाबूजी के बारे में है, जो सुदूर गाँव में रहते हैं । वे शहर जाते हैं और फिर शहर में उनके साथ जो कुछ घटित होता है, कहानी उसी के बारे में है । जो घटित हुआ वह अत्यंत अप्रत्याशित, दारुण और भयावह है । आमूल बदले हुए समय का यह नया, भीषण यथार्थ, जिसके शिकार बाबूजी बनते हैं, बेटे के सपने में 'तिरिछ' बनकर प्रकट होता है । तिरिछ एक विषैला और भयानक जंतु है जो कहानी में प्रतीक बन जाता है । इस कहानी को 'जादुई यथार्थ' की कहानी कहा जाता है । यह यथार्थ बाबूजी की गँवई वास्तविकता को पीछे छोड़कर और आगे-बहुत आगे बढ़ चुके शहर के तथाकथित आधुनिक समय के द्वंद्व से उपजता है । दुनिया के उन देशों में जहाँ यथार्थ और समय के बीच ऐसी खाई उभरी वहाँ जादुई यथार्थ प्रकट हुआ ।

तिरिछ

इस घटना का संबंध पिताजी से है । मेरे सपने से है और शहर से भी हैं । शहर के प्रति जो एक जन्मजात भय होता है, उससे भी है ।

पिताजी तब पचपन साल के हुए थे । दुबला शरीर । बाल बिलकुल मक्के के भुए जैसे सफेद । सिर पर जैसे रुई रखी हो । वे सोचते ज्यादा थे–बोलते बहुत कम । जब बोलते तो हमें राहत मिलती, जैसे देर से रुकी हुई साँस निकल रही हो । साथ-साथ हमें डर भी लगता । हम बच्चों के लिए वे एक बहुत बड़ा रहस्य थे । हमें पता था कि संसार की सारी भाषाएँ वे बोल सकते हैं । दुनिया उनको जानती है और हमारी तरह ही उनसे डरती हुई उनका सम्मान करती है ।

हमें उनकी संतान होने का गर्व था ।

कभी-कभी, वैसे ऐसा सालों में एकाध बार ही होता, वे शाम को हमें अपने साथ टहलाने कहीं बाहर ले जाते । चलने से पहले वे मुँह में तंबाकू भर लेते । तंबाकू के कारण वे कुछ बोल नहीं पाते थे । वे चुप रहते । यह चुप्पी हमें बहुत गंभीर, गौरवशाली, आश्चर्यजनक और भारी-भरकम लगती । छोटी बहन कभी उनसे रास्ते में कुछ पूछना चाहती तो फौरन मैं उसका जवाब देने की कोशिश करता, जिससे पिताजी को बोलना न पड़े ।

वैसे यह काम काफी मुश्किल और जोखिम भरा होता । क्योंकि मैं जानता था कि अगर मेरा जवाब गलत हुआ तो पिताजी को बोलना पड़ जाएगा । बोलने में उन्हें परेशानी होती थी । एक तो तंबाकू की पीक निकालनी पड़ती थी, फिर जिस दुनिया में वे रहते थे, वहाँ से निकलकर यहाँ तक आने में उन्हें एक कठिन दूरी तय करनी पड़ती थी । वैसे बहन के सवालों में कोई खास बात होती नहीं थी । जैसे वह यही पूछ लेती कि सामने छिउले की सूखी टहनी पर बैठी उस चिड़िया को क्या कहते हैं ? मैं चूँकि सारी चिड़ियों को जानता था इसलिए बता सकता था कि वह नीलकंठ है और दशहरे के दिन उसे जरूर देखना चाहिए । मेरी कोशिश रहती थी कि पिताजी को आराम रहे और वे सोचते रहें ।

मेरी और माँ की, दोनों की पूरी कोशिश रहती कि पिताजी अपनी दुनिया में सुख-चैन से रहें । वह दुनिया हमारे लिए बहुत रहस्यपूर्ण थी, लेकिन हमारे घर की और हमारे जीवन की बहुत सी समस्याओं का अंत पिताजी वहीं रहते हुए करते थे । जैसे जब मेरी फीस की बात आई, उस समय हमारे पास का आखिरी गिलास भी गुम गया था और सब लोग लोटे में पानी पीते थे । पिताजी दो दिन तक बिलकुल चुप

रहे । माँ को भी शक हुआ कि पिताजी फीस की बात बिलकुल भूल गए हैं या फिर इसका हल उनके वश की बात नहीं है । लेकिन तीसरे दिन, सुबह-सुबह, पिताजी ने मुझे एक पत्र लिफाफे में रखकर दिया और शहर के डॉक्टर पंत के पास भेजा । मुझे बहुत आश्चर्य हुआ जब डॉक्टर ने मुझे शरबत पिलाई, घर के भीतर ले जाकर अपने बेटे से परिचय कराया और सौ-सौ के तीन नोट मुझे दिए ।

हम पिताजी पर गर्व करते थे, प्यार करते थे, उनसे डरते थे और उनके होने का अहसास ऐसा था जैसे हम किसी किले में रह रहे हों । ऐसा किला, जिसके चारों ओर गहरी नहरें खुदी हुई हों, बुर्जें बहुत ऊँची हों, दीवारें सख्त लाल चट्टानों की बनी हुई हों और हर बाहरी हमले के सामने हमारा किला अभेद्य हो ।

पिताजी एक खूब्र मजबूत किला थे । उनके परकोटे पर हम सब कुछ भूलकर खेलते थे, दौड़ते थे । और, रात में खूब गहरी नींद मुझे आती थी ।

लेकिन उस दिन, शाम को, जब पिताजी बाहर से टहलकर आए तो उनके टखने में पट्टी बँधी थी । थोड़ी देर में गाँव के कई लोग वहाँ आ गए । पता चला कि पिताजी को जंगल में तिरिछ (विषखापर, जहरीला लिजार्ड) ने काट लिया है ।

हम सब जानते थे कि तिरिछ के काटने पर आदमी बच ही नहीं सकता । रात में, लालटेन की धुँधली-मटैली रोशनी में गाँव के बहुत से लोग आँगन में जमा हो गए थे । पिताजी उनके बीच थे, जमीन पर बैठे हुए । फिर पास के गाँव का चुटुआ नाई भी आया । वह अरंड के पत्ते और कंडे की राख से जहर उतारता था ।

तिरिछ एक बार मैंने देखा था ।

तालाब के किनारे जो बड़ी-बड़ी चट्टानों के ढेर थे, और जो दोपहर में खूब गर्म हो जाते थे, उनमें से किसी चट्टान की दरार से निकलकर वह पानी पीने तालाब की ओर जा रहा था ।

मेरे साथ थानू था । उसने बतलाया कि वह तिरिछ है, काले नाग से सौ गुना ज्यादा उसमें जहर होता है । उसी ने बताया कि साँप तो तब काटता है, जब उसके ऊपर पैर पड़ जाए या कोई जब जबरदस्ती उसे तंग करे । लेकिन तिरिछ तो नजर मिलते ही दौड़ता है । पीछे पड़ जाता है । उससे बचने के लिए कभी सीधे नहीं भागना चाहिए । टेढ़ा-मेढ़ा, चक्कर काटते हुए, गोल-मोल दौड़ना चाहिए ।

दरअसल जब आदमी भागता है तो जमीन पर वह सिर्फ अपने पैरों के निशान ही नहीं छोड़ता, बल्कि हर निशान के साथ, वहाँ की धूल में, अपनी गंध भी छोड़ जाता है । तिरिछ इसी गंध के सहारे दौड़ता है । थानू ने बतलाया कि तिरिछ को चकमा देने के लिए आदमी को यह करना चाहिए कि पहले तो वह बिलकुल पास-पास कदम रखकर, जल्दी-जल्दी कुछ दूर दौड़े फिर चार-पाँच बार खूब लंबी-लंबी छलाँग दे । तिरिछ सूँघता हुआ दौड़ता आएगा, जहाँ पास-पास पैर के निशान होंगे, वहाँ उसकी रफ्तार खूब तेज हो जाएगी-और जहाँ से आदमी ने छलाँग मारी होगी, वहाँ आकर वह उलझन में पड़ जाएगा । वह इधर-उधर तब तक भटकता रहेगा जब तक उसे अगले पैर का निशान और उसमें बसी गंध नहीं मिल जाती ।

हमें तिरिछ के बारे में दो बातें और पता थीं । एक तो यह कि जैसे ही वह आदमी को काटता है, वैसे ही वह वहाँ से भागकर किसी जगह पेशाब करता है और उस पेशाब में लोट जाता है । अगर तिरिछ ने ऐसा कर लिया तो आदमी बच नहीं सकता । अगर उसे बचना है तो तिरिछ के पेशाब में लोटने के पहले ही, खुद किसी नदी, कुएँ या तालाब में डुबकी लगा लेनी चाहिए या फिर तिरिछ के ऐसा करने के पहले ही उसे मार देना चाहिए ।

दूसरी बात यह कि तिरिछ काटने के लिए तभी दौड़ता है, जब उससे नजर टकरा जाए । अगर तिरिछ को देखो तो उससे कभी आँख मत मिलाओ । आँख मिलते ही वह आदमी की गंध पहचान लेता है और फिर पीछे लग जाता है । फिर तो आदमी चाहे पूरी पृथ्वी का चक्कर लगा ले, तिरिछ पीछे-पीछे आता है ।

मैं भी तमाम बच्चों की तरह उस समय तिरिछ से बहुत डरता था । मेरे दुःस्वप्न के सबसे खतरनाक पात्र दो ही थे-एक हाथी और दूसरा तिरिछ । हाथी तो फिर भी दौड़ता-दौड़ता थक जाता था और मैं पेड़ पर चढ़कर बच जाता था, या फिर उड़ने लगता था, लेकिन तिरिछ उसके सामने तो मैं किसी इंद्रजाल में बँध जाता था । मैं सपने में कहीं जा रहा होता तो अचानक ही किसी जगह वह मिल जाता, उसकी जगह तय नहीं होती थी । कोई जरूरी नहीं था कि वह चट्टानों की दरार में, पुरानी इमारतों के पिछवाड़े या किसी झाड़ी के पास दिखे-वह मुझे बाज़ार में, सिनेमा हाल में, किसी दुकान या मेरे कमरे में भी दिख सकता था ।

मैं सपने में कोशिश करता था कि उससे नजर न मिलने पाए, लेकिन वह इतनी परिचित आँखों से मुझे देखता कि मैं अपने-आपको रोक नहीं पाता था और बस आँख मिलते ही उसकी नजर बदल जाती थी-वह दौड़ता था और मैं भागता था ।

मैं गोल-गोल चक्कर लगाता था, जल्दी-जल्दी पास-पास डग भरकर अचानक खूब लंबी-लंबी छलाँगे लगाने लगता, उड़ने की कोशिश करता, किसी ऊँची जगह पर चढ़ जाता, लेकिन मेरी हजार कोशिशों के बावजूद वह चकमा नहीं खाता था । वह मुझे बहुत घाघ, समझदार, चतुर और खतरनाक लगता । मुझे लगता कि वह मुझे खूब अच्छी तरह से जानता है । उसकी आँखों में मेरे लिए परिचय की जो चमक थी, उससे मुझे लगता कि वह मेरा ऐसा शत्रु है जिसे मेरे दिमाग में आनेवाले हर विचार के बारे में पता है ।

मेरा सबसे खौफनाक, यातनादायक, भयाक्रांत और बेचैनी से भरा यही सपना था । भागते-भागते मेरा पूरा शरीर थक जाता, फेफड़े फूल जाते, मैं पसीने में लथ-पथ होकर बेदम होने लगता और एक बहुत ही डरावनी, सुन्न कर डालनेवाली मृत्यु मेरे बिलकुल करीब आने लगती । मैं जोरों से चीखता, रोने लगता । पिताजी को, थानू को या माँ को पुकारता और फिर मैं जान जाता कि यह सपना है । लेकिन यह पता चल जाने के बावजूद मैं अच्छी तरह से जानता कि तब भी मैं अपनी इस मृत्यु से नहीं बच सकता । मृत्यु नहीं-तिरिछ द्वारा अपनी हत्या से-और ऐसे में मैं सपने में ही कोशिश करता कि किसी तरह जाग जाऊँ । मैं पूरी ताकत लगाता, सपने के भीतर आँखें खोलकर फाड़ता, रोशनी को देखने की कोशिश करता ओर जोर से कुछ बोलता । कई बार बिलकुल ऐन मौके पर मैं जागने में सफल भी हो जाता ।

माँ बतलाती कि मुझे सपने में बोलने और चीखने की आदत है । कई बार उन्होंने मुझे नींद में

रोते हुए भी देखा था । ऐसे में उन्हें मुझे जगा डालना चाहिए, लेकिन वे मेरे माथे को सहला कर मुझे रजाई से ढँक देती थीं और मैं उसी खौफनाक दुनिया में अकेला छोड़ दिया जाता था । अपनी मृत्यु–बल्कि अपनी हत्या से बचने की कोशिश में भागता, दौड़ता, चीखता ।

वैसे, धीरे-धीरे मैंने अनुभवों से यह जान लिया था कि आवाज ही ऐसे मौके पर मेरा सबसे बड़ा अस्त्र है, जिससे मैं तिरिछ से बच सकता था । लेकिन दुर्भाग्य से, हर बार, इस अस्त्र की याद मुझे बिलकुल अंतिम समय पर आती थी । तब, जब वह मुझे बिलकुल पा लेनेवाला होता । अपनी हत्या की साँसें मुझे छूने लगतीं, मौत के नशे से भरे एक निर्जीव लेकिन डरावने अँधेरे से मैं घिर जाता, लगता मेरे नीचे कोई ठोस आधार नहीं है–मैं हवा में हूँ और वह पल आ जाता, जब मेरे जीवन का अंत होनेवाला होता । तभी, बिलकुल इसी एक बहुत ही छोटे और नाजुक पल में मुझे अपने इस अस्त्र की याद आती और मैं जोर-जोर से बोलने लगता और इस आवाज के सहारे मैं सपने से बाहर निकल आता । मैं जाग जाता ।

कई बार माँ मुझसे पूछतीं भी कि मुझे क्या हो गया था । तब मेरे पास इतनी भाषा नहीं थी कि मैं उन्हें सब कुछ, एक-एक चीज उसी तरह बता पाता । अपनी इस असमर्थता के बारे में मुझे खूब पता था और इसी वजह से मैं एक अजीब से तनाव, बेचैनी और असहायता से भर जाता । अंत में हारकर इतना ही कह पाता कि ''बहुत डरावना सपना था।''

जाने क्यों मुझे शक था कि पिताजी को उसी तिरिछ ने काटा था, जिसे मैं पहचानता था और जो मेरे सपने में आता था ।

लेकिन एक अच्छी बात यह हुई कि जैसे ही वह तिरिछ पिताजी को काटकर भागा, पिताजी ने उसका पीछा करके उसे मार डाला था । तय था कि अगर वे फौरन उसे नहीं मार पाते तो वह पेशाब करके उसमें जरूर लोट जाता । फिर पिताजी किसी हाल में न बचते । यही वजह थी कि पिताजी को लेकर मुझे उतनी चिंता नहीं रह गई थी । बल्कि एक तरह की राहत और मुक्ति की खुशी मेरे भीतर धीरे-धीरे पैदा हो रही थी । कारण, एक तो यही कि पिताजी ने तिरिछ को तुरंत मार डाला था और दूसरा यह कि मेरा सबसे खतरनाक, पुराना परिचित शत्रु आखिरकार मर चुका था । उसका वध हो गया था और अब मैं अपने सपने के भीतर, कहीं भी, बिना किसी डर के, सीटी बजाता घूम सकता था ।

उस रात देर तक हमारे आँगन में भीड़ रही आई । पिताजी की झाड़फूँक चलती रही । काटे के जख्म को चीर कर खून भी बाहर निकाला गया और कुएँ में डालनेवाली लाल दवा (पोटेशियम परमैंगनेट) जख्म में भरा गया । मैं निश्चिंत था ।

अगली सुबह पिताजी को शहर जाना था । अदालत में पेशी थी । उनके नाम सम्मन आया था । हमारे गाँव से लगभग दो किलोमीटर दूर निकलनेवाली सड़क से शहर के लिए बसें गुजरती थीं । उनकी संख्या दिन भर में मुश्किल से दो या तीन थीं । गनीमत थी कि पिताजी जैसे ही सड़क तक पहुँचे, शहर जानेवाला पास के गाँव का एक ट्रैक्टर उन्हें मिल गया । ट्रैक्टर में बैठे हुए लोग पहचान के थे । ट्रैक्टर दो-ढाई घंटे में शहर पहुँच जानेवाला था । यानी अदालत खुलने से काफी पहले ।

रास्ते में तिरिछ वाली बात चली । पिताजी ने अपना टखना उन लोगों को दिखलाया । ट्रैक्टर में

पंडित राम औतार भी थे । उन्होंने बतलाया कि तिरिछ के जहर की एक खासियत यह भी है कि कभी-कभी यह चौबीस घंटे बाद, ठीक उसी वक्त जिस वक्त पिछले दिन तिरिछ काटता है, अपना असर दिखाता है । इसलिए अभी पिताजी को निश्चिंत नहीं होना चाहिए । ट्रैक्टर के लोगों ने पिताजी का ध्यान एक और बड़ी गलती की ओर खींचा । उनका कहना था कि यह तो पिताजी ने ठीक किया कि तिरिछ को फौरन मार डाला, लेकिन इसके बाद भी तिरिछ को यों ही नहीं छोड़ देना चाहिए था । उसे कम से कम जला जरूर देना चाहिए था ।

उन लोगों का कहना था कि बहुत से कीड़े-मकोड़े और जीव-जंतु रात में चंद्रमा की रोशनी में दुबारा जी उठते हैं । चाँदनी में जो ओस और शीत होती है उसमें अमृत होता है और कई बार ऐसा देखा गया है कि जिस साँप को मरा हुआ समझकर रात में यों ही फेंक दिया जाता है, उसका शरीर चाँद की शीत में भीग कर दुबारा जी उठता है और वह भाग जाता है । फिर वह हमेशा बदला लेने की ताक में रहता है ।

ट्रैक्टर के लोगों को शक था कि कहीं ऐसा न हो कि रात में जी उठने के बाद तिरिछ पेशाब करके उसमें लोट जाए । ऐसा हुआ तो चौबीस घंटे बीतते-बीतते, ठीक उसी घड़ी के आने पर, तिरिछ का जानलेवा जहर पिताजी पर चढ़ना शुरू हो जाएगा । उन लोगों ने सलाह भी दी कि पिताजी को वहीं से वापस लौट जाना चाहिए और अगर संयोग से, उस तिरिछ की लाश उसी जगह पड़ी हुई हो, तो उसे अच्छी तरह जलाकर राख कर देना चाहिए । लेकिन पिताजी ने उन्हें बताया कि पेशी कितनी जरूरी थी । यह तीसरा सम्मन था और अगर इस बार भी वे अदालत में हाजिर न हुए तो गैर-जमानती वारंट निकलने का डर था । पेशी भी हमारे उसी मकान को लेकर थी, जिसमें हमारा परिवार रह रहा था । वकील को पिछले दो बार की पेशी में फीस भी नहीं दी जा सकी थी और कहीं अगर उसने लापरवाही दिखला दी और जज सनक गया तो वह हमारी कुड़की-डिक्री भी करवा सकता था ।

विचित्र स्थिति थी कि अगर पिताजी उस तिरिछ की लाश को जलाने के लिए ट्रैक्टर से उतरकर, वहीं से, गाँव लौट आते तो गैर-जमानती वारंट के तहत वे गिरफ्तार कर लिए जाते और हमारा घर हमसे छिन जाता । अदालत हमारे खिलाफ हो जाती ।

लेकिन पंडित राम औतार एक वैद्य भी थे । ज्योतिष पंचांग के अलावा उन्हें जड़ी-बूटियों की भी बड़ी गहरी जानकारी थी । उन्होंने सुझाया कि एक तरीका ऐसा है, जिससे पिताजी पेशी में हाजिर भी हो सकते हैं और तिरिछ के जहर से चौबीस घंटे के बाद बच भी सकते हैं । उन्होंने बताया कि चरक का निचोड़ इस सूत्र में है कि विष ही विष की औषधि होता है । अगर धतूरे के बीज कहीं मिल जाएँ तो वह तिरिछ के जहर की काट तैयार कर सकते हैं ।

अगले गाँव सामतपुर में ट्रैक्टर रोक दिया गया और एक तेली के खेत में धतूरे के पौधे आखिरकार खोज निकाले गए । धतूरे के बीजों को पीसकर उसे ताँबे के पुराने सिक्के के साथ उबालकर काढ़ा तैयार किया गया । काढ़ा बहुत कड़वा था इसलिए उसे चाय में मिलाया गया और पिताजी को वह चाय पिला दी गई । इसके बाद सभी निश्चिंत हो गए । एक बहुत बड़े खतरे से पिताजी को निकालने की कोशिश हो रही थी ।

वैसे मुझे तिरिछ के बारे में तीसरी बात भी पता थी, जो पिताजी के जाने के कई घंटे बाद अचानक याद आ गई थी । यह बात साँप की उस बात से मिलती-जुलती थी, जिसके फलस्वरूप आगे चलकर कैमरे का आविष्कार हुआ था ।

माना यह जाता था कि अगर कोई आदमी साँप को मार रहा हो तो अपने मरने से पहले वह साँप, अंतिम बार, अपने हत्यारे के चेहरे को पूरी तरह से, बहुत गौर से देखता है । आदमी उसकी हत्या कर रहा होता है और साँप टकटकी बाँधकर उस आदमी के चेहरे की एक-एक बारीकी को अपनी आँख के भीतरी पर्दे में दर्ज कर रहा होता है । साँप की मृत्यु के बाद साँप की आँख के भीतरी पर्दे पर उस आदमी का चित्र स्पष्ट दर्ज हो जाता है ।

बाद में, आदमी के जाने के बाद, उस साँप का दूसरा जोड़ा आकर उस मरे हुए साँप की आँख के भीतर झाँकता है और इस तरह वह हत्यारा पहचान लिया जाता है । सारे साँप उसे पहचानने लगते हैं । फिर वह कहीं भी चला जाए, उससे बदला लेने की फिराक में वे रहते हैं । हर साँप उसका शत्रु होता है ।

मुझे शक था कि मरे हुए तिरिछ की आँख के भीतरी पर्दे पर पिताजी का चेहरा दर्ज होगा । कोई दूसरा तिरिछ आकर उस लाश की आँख में झाँकेगा और पिताजी वहाँ पहचान लिए जाएँगे । मेरे भीतर इस बात को लेकर बेचैनी पैदा हुई कि पिताजी ने यह सतर्कता क्यों नहीं बरती ? उन्हें तिरिछ को मारने के साथ ही किसी पत्थर से उसकी दोनों आँखों को कुचलकर फोड़ देना चाहिए था । लेकिन अब क्या हो सकता था ? पिताजी शहर जा चुके थे और मेरे सामने उलझन और चुनौती थी कि गाँव के पास फैले इतने बड़े जंगल में किस जगह तिरिछ को मारकर उन्होंने छोड़ा था, वह जगह मैं खोज निकालूँ ।

मैं थानू के साथ बोतल में मिट्टी का तेल, दियासलाई और डंडा लेकर जंगल में तिरिछ की खोज में भटकता रहा । मैं उसे अच्छी तरह पहचानता था । बहुत अच्छी तरह । थानू निराश था ।

फिर, मुझे अचानक ही लगने लगा कि इस जंगल को मैं अच्छी तरह जानता हूँ । एक-एक पेड़ मेरा परिचित निकलने लगा । इसी जगह से कई बार सपने में मैं तिरिछ से बचने के लिए भागा था । मैंने गौर से हर तरफ देखा–बिलकुल यही जगह थी । मैंने थानू को बताया कि एक सँकरा सा नाला इस जगह से कितनी दूर दक्षिण की तरफ बहता है । नाले के ऊपर जहाँ बड़ी-बड़ी चट्टानें हैं, वहाँ कीकर का एक बहुत पुराना पेड़ है, जिस पर बड़े शहद के छत्ते हैं । उन्हें देखकर लगता है कि वे कई शताब्दियों पुराने हैं । मैं उस भूरे रंग की चट्टान को जानता था, जो बरसात भर नाले के पानी में आधी डूबी रहती थी और बारिश के बीतने के बाद जब बाहर निकलती थी तो उसकी खोहों में कीचड़ भर जाती थी और अजब-अजब वनस्पतियाँ वहाँ से उग आती थीं । चट्टान के ऊपर हरी काई की एक परत सी जम जाती थी । इसी चट्टान की सबसे ऊपरवाली दरार में तिरिछ रहता था । थानू इस बात को मेरी कल्पना मान रहा था ।

लेकिन बहुत जल्द हमें वह नाला मिल गया । कीकर का वह बूढ़ा पेड़ भी, जिस पर शहद के छत्ते थे, और वह चट्टान भी । तिरिछ की लाश चट्टान से जरा हटकर, जमीन पर, घास के ऊपर चित पड़ी हुई थी । बिलकुल यह वही तिरिछ था । मेरे भीतर हिंसा और उत्तेजना और खुशी की एक सनसनी

दौड़ रही थी ।

थानू ने और मैंने सूखे पत्ते और लकड़ियाँ इकट्ठी कीं, खूब सारा मिट्टी का तेल उसमें डाला और उसमें आग लगा दी । तिरिछ उसमें जल रहा था । उसके जलने की चिरायंध गंध हवा में फैल रही थी । मेरा मन जोर से चिल्लाने को हुआ लेकिन मैं डरा कि कहीं मैं जाग न जाऊँ और यह सब कुछ सपना न साबित हो जाए । मैंने थानू की ओर देखा । वह रो रहा था । वह मेरा बहुत अच्छा दोस्त था ।

मेरे सपने में इसी जगह से निकलकर उस तिरिछ ने कई बार मेरा पीछा करना शुरू किया था । आश्चर्य था कि इतने लंबे अर्से से उसके अड्डे को इतनी अच्छी तरह से जानने के बावजूद कभी दिन में आकर मैंने उसे मारने की कोई कोशिश नहीं की थी ।

मैं आज बेतहाशा खुश था ।

पंडित राम औतार ने बतलाया था कि ट्रैक्टर ने पौने दस बजे के लगभग शहर का चुंगीनाका पार किया था । वहाँ उन्हें नाके का टोल टैक्स चुकाने के लिए कुछ देर रुकना भी पड़ा था । वहाँ पर पिताजी ट्रैक्टर से उतरकर पेशाब करने गए थे । लौटने पर उन्होंने बताया कि उनका सिर कुछ घूम सा रहा है, तब तक पिताजी को धतूरे का काढ़ा पिए हुए तकरीबन डेढ़ घंटा हो चुका था । ट्रैक्टर ने पिताजी को शहर में दस बजकर पाँच-सात मिनट के आसपास छोड़ दिया था । ट्रैक्टर में ही बैठे पलड़ा गाँव के मास्टर नंदलाल का कहना था कि जब शहर में, मिनर्वा टाकीज के पासवाले चौराहे पर पिताजी को ट्रैक्टर से उतारा गया, तब उन्होंने शिकायत की थी कि उनका गला कुछ सूख सा रहा है । वे थोड़ा परेशान भी थे क्योंकि अदालत जाने का रास्ता उन्हें मालूम नहीं था और शहर के लोगों से पूछ-पूछकर कहीं जाने में उन्हें बहुत तकलीफ होती थी ।

पिताजी के साथ एक दिक्कत यह भी थी कि गाँव या जंगल की पगडंडियाँ तो उन्हें याद रहती थीं, शहर की सड़कों को वे भूल जाते थे । शहर वे बहुत कम जाते थे । जाना ही पड़े तो अंतिम समय तक वे टालते रहते थे, तब तक, जब तक जाना बिलकुल ही जरूरी न हो जाए । कई बार तो ऐसा भी हुआ कि पिताजी सारा सामान लेकर शहर के लिए रवाना हुए और बस-अड्डे से लौट आए । बहाना यह कि बस छूट गई । जब कि हम सब जानते थे कि ऐसा नहीं हुआ होगा । पिताजी ने बस को देखा होगा, फिर वे कहीं बैठ गए होंगे—पेशाब करने या पान खाने । फिर उन्होंने देखा होगा कि बस छूट रही है । उन्होंने जरा सा और इंतजार किया होगा । जब बस ने रफ्तार पकड़ ली होगी—तब वे कुछ दूर तक दौड़े होंगे । फिर उनके कदम धीमे पड़ गए होंगे और अफसोस और गुस्सा प्रकट करते वे लौट आए होंगे । ऐसा करते हुए स्वयं भी लगा होगा कि बस सचमुच छूट गई है । ऐसे में, जब कि हम मान चुके होते कि वे शहर जा चुके हैं, वे लौटकर हमें चकित कर देते ।

ट्रैक्टर से मिनर्वा टाकीज के पास वाले चौराहे पर, सिंध वाच कंपनी के ठीक सामने लगभग दस बजकर सात मिनट पर उतरने के बाद से लेकर शाम के छह बजे तक पिताजी के साथ शहर में जो कुछ भी हुआ, उसका सिर्फ एक धुँधला सा अनुमान ही लगाया जा सकता है । यह जानकारी भी कुछ लोगों से बातचीत और पूछताछ के बाद मिली है । किसी की भी मृत्यु के बाद, अगर वह मृत्यु आकस्मिक और

अस्वाभाविक ढंग से हुई हो, ऐसी जानकारियाँ मिल ही जाती हैं । उस दिन, बुधवार 17 मई 1972 को सुबह दस-दस से लेकर शाम छह बजे तक लगभग पौने आठ घंटे में पिताजी कहाँ-कहाँ गए, कहाँ-कहाँ उनके साथ क्या-क्या हुआ, इसका बहुत सही और विस्तृत ब्यौरा तो मिलना मुश्किल है । जो सूचनाएँ या जानकारियाँ बाद में मिलीं, उनके जरिए उन घटनाओं का सिर्फ अनुमान ही लगाया जा सकता है ।

जैसा कि पलड़ा गाँव के मास्टर नंदलाल का कहना था कि जब पिताजी ट्रैक्टर से उतरे, तभी उन्होंने गला सूखने की शिकायत की थी । इसके पहले चुंगीनाका के पास, जब पेशाब करके पिताजी लौटे थे तो उन्होंने सिर घूमने की बात की थी । यानी पिताजी पर धतूरे के बीजों का असर होना शुरू हो गया था । वैसे भी शहर पहुँचने तक पिताजी को काढ़ा पिए हुए लगभग दो घंटे हो चुके थे । मेरा अनुमान है कि उस समय पिताजी को प्यास बहुत लगी होगी । गला भिगोने के लिए वे किसी होटल या ढाबे की तरफ गए भी होंगे, लेकिन जैसा कि मुझे उनके स्वभाव के बारे में पता है, वे वहाँ कुछ देर तक खड़े रहे होंगे, और फिर एक गिलास पानी माँगने का फैसला न कर सके होंगे । एक बार उन्होंने बताया भी था कि कुछ साल पहले गर्मियों के दिनों में जब उन्होंने किसी होटल में पानी माँगा था, तो वहाँ काम करने वाले नौकर ने उन्हें गाली दी थी । पिताजी बहुत संवेदनशील थे, इसलिए उन्होंने अपनी प्यास को दबाया होगा और वे वहाँ से चल पड़े होंगे ।

सवा दस बजे से लेकर ग्यारह बजे के बीच, पैंतालीस मिनट तक पिताजी कहाँ-कहाँ गए, इसकी कोई जानकारी कहीं से नहीं मिलती । इस बीच ऐसी कोई खास घटना भी नहीं हुई, जिससे कोई कुछ कह सके । फिर शहर में सड़क पर आते-जाते लोगों में से किसी ने उन पर ध्यान दिया हो, उन्हें देखा हो, इसका पता लगाना भी मुश्किल है । वैसे मेरा अपना अंदाजा है कि इस बीच पिताजी ने कुछ लोगों से अदालत जाने का रास्ता पूछा होगा और उनके दिमाग में यह बात भी रही होगी कि वहाँ पहुँचकर वे अपने वकील एस० एन० अग्रवाल से पानी माँग लेंगे । लेकिन उनके पूछने पर या तो लोग चुप रह कर तेजी से आगे बढ़ गए होंगे या किसी ने इतनी बौखलाहट और जल्दबाजी में उन्हें कुछ बताया होगा, जो पिताजी ठीक से समझ नहीं सके होंगे और सिर्फ अपमानित, दुखी और परेशान होकर रह गए होंगे । शहर में ऐसा होता ही है ।

वैसे बीच के पौन घंटे के बारे में मेरा अपना अनुमान है कि इस बीच पिताजी पर काढ़े का असर काफी बढ़ गया होगा । मई की धूप और प्यास ने इस असर को और भी तेज, और भी गहरा कर दिया होगा । उनके पैर लड़खड़ाने भी लगे होंगे और बहुत संभव है कि एकाध बार, इस बीच, उन्हें चक्कर भी आ गए हों ।

पिताज़ी ग्यारह बजे, शहर में देशबंधु मार्ग पर स्थित स्टेट बैंक ऑफ इंडिया की इमारत में घुसे थे । वे वहाँ क्यों गए, इसकी वजह ठीक-ठीक समझ में नहीं आती । वैसे हमारे गाँव का रमेश दत्त शहर में भूमि विकास सहकारी बैंक में क्लर्क है । हो सकता है पिताजी के दिमाग में सिर्फ बैंक रहा हो और वहाँ से गुजरते हुए अचानक स्टेट बैंक लिखा हुआ देखा हो और वे उधर घूम गए हों । उन्होंने अब तक पानी नहीं पिया था इसलिए उन्होंने सोचा होगा कि वे रमेश दत्त से पानी भी माँग लेंगे, अदालत जाने का रास्ता भी पूछ लेंगे और बता सकेंगे कि उनका सिर घूम सा रहा है, यह भी कि कल शाम को उन्हें तिरिछ ने

काटा था । स्टेट बैंक के कैशियर अग्निहोत्री के अनुसार वह उस समय कैश रजिस्ट्री चेक कर रहा था। उसकी मेज पर लगभग अट्ठाइस हजार रुपयों की गड्डियाँ रखी हुई थीं । उस वक्त ग्यारह से दो-तीन मिनट ऊपर हुए होंगे, तभी पिताजी वहाँ आए । उनके चेहरे पर धूल लगी हुई थी, चेहरा डरावना था और अचानक ही उन्होंने जोर से कुछ कहा था । अग्निहोत्री का कहना था कि मैं अचानक डर गया । अमूमन ऐसे लोग बैंक के इतने भीतर, कैशियर के टेबिल तक नहीं पहुँच जाते । अग्निहोत्री का कहना यह भी था कि अगर वह पिताजी को एकाध मिनट पहले से अपनी ओर आता हुआ देख लेता, तब शायद न डरता । लेकिन हुआ यह कि वह पूरी तरह से कैश रजिस्टर के हिसाब-किताब में डूबा हुआ था, तभी अचानक ही पिताजी ने आवाज निकाली और सिर उठाते ही उन्हें देखकर वह डर गया और चीख पड़ा । उसने घंटी भी बजा दी ।

बैंक के चपरासियों, दो चौकीदारों और दूसरे कर्मचारियों के अनुसार अचानक ही कैशियर की चीख और घंटी की आवाज से वे सब चौंक गए और उस तरफ दौड़े, तब तक नेपाली चौकीदार थापा ने पिताजी को दबोच लिया था और मारता हुआ कॉमन रूम की तरफ ले जा रहा था । एक चपरासी रामकिशोर, जिसकी उम्र पैंतालीस के आसपास थी, ने कहा कि उसने समझा कि कोई शराबी दफ्तर में घुस आया है, या पागल और चूँकि उसकी ड्यूटी बैंक के मुख्य दरवाजे पर थी इसलिए ब्रांच मैनेजर उसे चार्जशीट कर सकता था । लेकिन हुआ यह कि जब पिताजी को मारा जा रहा था, तभी उन्होंने अंग्रेजी में कुछ बोलना शुरू कर दिया । इसी वजह से चपरासियों का शक बढ़ गया । इसी बीच शायद असिस्टेंट ब्रांच मैनेजर मेहता ने यह कह दिया कि इस आदमी की अच्छी तरह से तलाशी ले लेना तभी बाहर निकलने देना । वैसे चपरासी रामकिशोर का कहना था कि पिताजी का चेहरा अजीब तरह से डरावना हो गया था । उस पर धूल जमा हो गई थी और उल्टी की बास आ रही थी । बैंक के चपरासियों ने पिताजी को ज्यादा मारने-पीटने की बात से इनकार किया, लेकिन बैंक के बाहर, ठीक दरवाजे के पास जो पान की दुकान है, उसमें बैठने वाले बुन्नू का कहना था कि जब साढ़े ग्यारह बजे के आस-पास पिताजी बैंक से बाहर आए तो उनके कपड़े फटे हुए थे और निचला होंठ कट गया था, जहाँ से खून निकल रहा था । आँखों के नीचे सूजन और कत्थई चकत्ते थे । ऐसे चकत्ते बाद में बैंगनी या नीले पड़ जाते हैं ।

इसके बाद, यानी साढ़े ग्यारह बजे से लेकर एक बजे के बीच पिताजी कहाँ-कहाँ गए, इसके बारे में जानकारी नहीं मिलती । हाँ स्टेट बैंक के बाहर पान की दुकान लगानेवाले बुन्नू ने एक बात बताई थी हालाँकि इस बारे में वह पूरी तरह स्पष्ट नहीं था, या हो सकता है कि स्टेट बैंक के कर्मचारियों से डर की वजह से वह साफ-साफ बतलाने से कतरा रहा हो । बुन्नू ने बतलाया था कि स्टेट बैंक से बाहर निकलने पर शायद (वह 'शायद' पर बहुत जोर डाल रहा था) पिताजी ने कहा था कि उनके रुपए और कागजात बैंक के कर्मचारियों ने छीन लिए हैं । लेकिन बुन्नू का कहना था कि हो सकता है पिताजी ने कोई और बात कही हो, क्योंकि वे ठीक से बोल नहीं पा रहे थे, उनका निचला होंठ काफी कट गया था, मुँह से लार भी बह रही थी और उनका दिमाग सही नहीं था ।

मेरा अंदाजा है कि इस समय तक पिताजी पर काढ़े का असर बहुत ज्यादा हो चुका था । हालाँकि पंडित राम औतार इस बात से इनकार करते हैं । उनका कहना था कि धतूरे के बीज तो होली के दिनों

में भाँग के साथ भी घोटे जाते हैं, लेकिन कभी ऐसा नहीं होता कि आदमी पूरी तरह से पागल हो जाए। पंडित राम औतार का मानना है कि या तो तिरिछ का जहर उस समय पिताजी के शरीर में चढ़ना शुरू हो गया था और उसका नशा उनके दिमाग तक पहुँचने लगा था । या फिर बहुत संभव है कि जब स्टेट बैंक में पिताजी को थापा चौकीदार और चपरासियों ने मारा-पीटा था तब उनके सिर के पीछे की तरफ कोई चोट लग गई हो और उस धक्के से उनका दिमाग सनक गया हो । लेकिन मुझे लगता है कि उस समय तक पिताजी को थोड़ा-बहुत होश था और वे पूरी कोशिश कर रहे थे कि किसी तरह वे शहर से बाहर निकल जाएँ । शायद रुपए और कागजात बैंक में छिन जाने की वजह से उन्होंने सोचा हो कि अब यहाँ रहने का कोई मतलब भी नहीं है । उन्होंने शायद एकाध बार सोचा भी होगा कि वापस स्टेट बैंक जाकर अपने कागजात तो कम से कम माँग लाएँ । फिर ऐसा कहने की उनकी हिम्मत नहीं पड़ी होगी । वे डर गए होंगे । उन्हें उनके जीवन में पहली बार इस तरह से मारा गया था, इसलिए वे ठीक से सोच पाने में सफल नहीं हो पा रहे होंगे । उनका शरीर बहुत दुबला था और बचपन से ही उन्हें एपेंडिसाइटिस की शिकायत थी । यह भी हो सकता है कि उस वक्त तक उन पर काढ़े का असर इतना ज्यादा हो गया हो कि वे एक चीज पर देर तक सोच ही नहीं पा रहे हों और दिमाग में हर पल पैदा होनेवाले, छोटे-छोटे बुलबुलों जैसे विचारों या नए-नए झटकों के वश में आकर इधर से उधर चल पड़ते रहे हों । लेकिन मैं यह जानता हूँ, मुझे अच्छी तरह से महसूस होता है कि उनके दिमाग में घर लौट आने और शहर से बाहर निकल जाने की बात–एक स्थाई, बार-बार कहीं अँधेरे से उभरनेवाली, भले ही बहुत क्षीण और बहुत धुँधली बात–जरूर रही होगी ।

पिताजी लगभग सवा बजे शहर के पुलिस थाना पहुँचे थे । थाना शहर के बाहरी छोर पर सर्किट हाउस के पास बने विजय स्तंभ के पास है । आश्चर्य यह है कि थाने से बमुश्किल एक किलोमीटर दूर अदालत पहुँच सकते थे । समझ में यह नहीं आता कि पिताजी अगर यहाँ तक पहुँचे थे, क्या तब तक उनके दिमाग में अदालत जाने की बात रह भी गई थी ? उनके कागजात तो नहीं रह गए थे ।

थाने के एस. एच. ओ. राघवेंद्र प्रताप सिंह ने कहा कि उस वक्त एक बजकर पंद्रह मिनट हुए थे । वे घर से लाए गए टिफिन को खोलकर लंच लेने की तैयारी कर रहे थे । आज टिफिन में पराठों के साथ करेले रखे हुए थे । करेले वे खा नहीं पाते और इसी उलझन में थे कि अब क्या करें । तभी पिताजी वहाँ आए थे। उनके शरीर पर कमीज नहीं थी, पैंट फटी हुई थी । लगता था कि वे कहीं गिरे होंगे या किसी वाहन ने उन्हें टक्कर मारी होगी । थाने में उस वक्त एक ही सिपाही गजाधर प्रसाद शर्मा मौजूद था । सिपाही का कहना था कि उसने सोचा कि शायद कोई भिखमंगा थाने में घुस आया है । उसने आवाज भी दी लेकिन पिताजी तब तक एस. एच. ओ. राघवेंद्र प्रताप सिंह की टेबिल तक पहुँच चुके थे। एस. एच. ओ. ने कहा कि करेलों की वजह से वैसे भी उनका मूड ऑफ था । तेरह साल के विवाहित जीवन के बावजूद पत्नी यह नहीं जान पाई थी कि उन्हें कौन सी चीजें बिलकुल नापसंद हैं, इतनी नापसंद कि वे उन चीज़ों से घृणा करते हैं । उन्होंने जैसे ही निवाला मुँह में रखा, पिताजी बिलकुल उनके करीब पहुँच गए । पिताजी के चेहरे और कंधों के नीचे उल्टी लगी हुई थी और उसकी बहुत तेज गंध उठ रही थी । एस. एच. ओ. ने पूछा कि क्या बात है । तो जवाब में पिताजी ने जो कुछ कहा उसे समझना बहुत मुश्किल था । एस. एच. ओ. राघवेंद्र प्रताप सिंह बाद में पछता रहे थे कि अगर उन्हें मालूम होता कि यह

आदमी बकेली ग्राम का प्रधान और भूतपूर्व अध्यापक है तो वे उसे थाने में ही कम से कम दो-चार घंटे बिठा लेते। बाहर न जाने देते। लेकिन उस समय उन्हें लगा कि यह कोई पागल है और उन्हें खाते हुए देखकर यहाँ तक घुस आया है इसीलिए उन्होंने सिपाही गजाधर शर्मा को गुस्से में आवाज़ दी। सिपाही पिताजी को घसीटता हुआ बाहर ले गया। गजाधर शर्मा का कहना था कि उसने पिताजी के साथ कोई मार-पीट नहीं की थी और उसने देखा कि जब वे थाने आए थे तब उनका निचला होंठ कटा था। ठुड्डी पर कहीं रगड़ा खाकर गिरने से खरोंच के निशान थे और कुहनियाँ छिली हुई थीं। वे कहीं न कहीं गिरे जरूर थे।

यह कोई नहीं जानता कि थाने से निकलकर लगभग डेढ़ घंटे पिताजी कहाँ-कहाँ भटकते रहे। सुबह दस बजकर सात मिनट पर, जब वे शहर आए थे और मिनर्वा टाकीज के पास वाले चौराहे पर ट्रैक्टर से उतरे थे, तब से लेकर अब तक उन्होंने कहीं पानी पिया था या नहीं, इसे जानना मुश्किल है। इसकी संभावना भी कम ही बनती है। हो सकता है तब तक उनका दिमाग इस काबिल न रह गया हो कि वे प्यास को भी याद रख सकें। लेकिन अगर वे पुलिस थाने तक पहुँचे तो उनके मस्तिष्क में, नशे के बावजूद, कहीं बहुत कमजोर सा, अँधेरे में डूबा यह ख्याल रहा होगा कि वे किसी तरह अपने गाँव जाने का रास्ता वहाँ पूछ लें, या उस ट्रैक्टर का पता पूछें या फिर अपने रुपए और अदालती क़ागजात छिन जाने की रिपोर्ट वहाँ लिखा दें। यह सोचने के करीब पहुँचना ही बुरी तरह से बेचैन कर डालने वाला है कि उस समय पिताजी सिर्फ तिरिछ के जहर और धतूरे के नशे के खिलाफ ही नहीं लड़ रहे थे, बल्कि हमारे मकान को बचाने की चिंता भी कहीं न कहीं उनके नशे की नींद में से बार-बार सिर उठा रही थी। शायद उन्हें अब तक यह लगने लगा हो कि यह सब कुछ जो हो रहा है, सिर्फ एक सपना है, पिताजी इससे जागने और बाहर निकलने की कोशिश करते रहे होंगे।

सवा दो बजे के आस-पास पिताजी को शहर के बिलकुल उत्तरी छोर पर बसी सबसे संपन्न कोलोनी-इतवारी कोलोनी में घिसटते हुए देखा गया था। कोलोनी सर्राफा के जौहरियों, पी. डब्ल्यू. डी. के बड़े ठेकेदारों और रिटायर्ड अफसरों की कोलोनी थी। कुछ समृद्ध पत्रकार, कवि भी वहीं ठहरते थे। यह कोलोनी हमेशा शांत और घटनाहीन रहती थी। जिन लोगों ने यहाँ पिताजी को देखा था, उन्होंने बताया कि उस वक्त तक उनके शरीर में सिर्फ एक पट्टेदार जाँघिया बचा था, जिसका नाड़ा शायद टूट गया था और वे उसे अपने बाएँ हाथ से बार-बार सँभाल रहे थे। जिसने भी उन्हें वहाँ देखा, उसने यही समझा कि कोई पागल है। कुछ ने कहा कि वे बीच-बीच में खड़े होकर जोर-जोर से गालियाँ बकने लगे थे। बाद में, उसी कोलोनी में रहनेवाले एक रिटायर्ड तहसीलदार सोनी साहब और शहर के सबसे बड़े अखबार के विशेष संवाददाता और कवि सत्येंद्र थपलियाल ने बताया कि उन्होंने पिताजी के बोलने को ठीक से सुना था और दरअसल वे गालियाँ नहीं बक रहे थे बल्कि बार-बार कह रहे थे-''मैं रामस्वारथ प्रसाद, एक्स स्कूल हेडमास्टर...एंड विलेज हेड ऑफ......ग्राम बकेली...!'' कवि पत्रकार थपलियाल साहब ने दुख जाहिर किया। दरअसल उसी समय वे अमरीकी दूतावास की किसी खास पार्टी में संगीत सुनने दिल्ली जा रहे थे इसलिए जल्दबाजी में वे चले गए। हाँ तहसीलदार सोनी साहब का कहना था कि ''मुझे उस आदमी पर बहुत तरस आया और मैंने लड़कों को डाँटा भी। लेकिन दो-तीन लड़कों ने कहा कि यह आदमी रामरतन सर्राफ की बीवी और साली पर हमला करने वाला था।'' तहसीलदार ने कहा कि ऐसा सुनने के बाद उन्हें भी लगा

कि हो सकता है यह कोई बदमाश हो और नाटक कर रहा हो । लड़के उन्हें तंग करने में लगे थे और पिताजी बीच-बीच में जोर-जोर से बोलते थे, "मैं रामस्वारथ प्रसाद....एक्स स्कूल हेडमास्टर..."

अगर हिसाब लगाया जाए तो मिनर्वा टाकीज के पास वाला चौराहा, जहाँ पिताजी ट्रैक्टर से सुबह दस बजकर सात मिनट पर उतरे थे, वहाँ से लेकर देशबंधु मार्ग का स्टेट बैंक फिर विजय स्तंभ के पास का थाना और शहर के बाहरी उत्तरी छोर पर बसी इतवारी कोलोनी को मिलाकर वे अब तक लगभग तीस-बत्तीस किलोमीटर की दूरी तक भटक चुके थे । ये जगहें ऐसी हैं जो एक ही दिशा में नहीं हैं । इसका मतलब यह हुआ कि पिताजी की दिमागी हालत यह थी कि उन्हें ठीक-ठीक कुछ सूझ नहीं रहा था और वे अचानक ही, किसी भी तरफ चल पड़ते थे । जहाँ तक सर्राफ की पत्नी और साली पर हमले करने की बात है, जिसे थपलियाल साहब सच मानते हैं, मेरा अनुमान है कि पिताजी उनके पास या तो पानी माँगने गए होंगे या बकेली जानेवाली सड़क के बारे में पूछने । उस एक पल के लिए पिताजी को होश जरूर रहा होगा । लेकिन इस हुलिए के आदमी को अपने इतना करीब देखकर वे औरतें डरकर चीखने लगी होंगी । वैसे, पिताजी की दाहिनी आँख के ऊपर भौंह पर जो चोट लगी थी और जिसका खून रिसकर उनकी आँख पर आने लगा था, वह चोट उनको इतवारी कोलोनी में ही लगी थी, क्योंकि बाद में लोगों ने बताया कि लड़के बीच-बीच में ढेले मार रहे थे ।

वह जगह इतवारी कोलोनी से बहुत दूर नहीं है, जिस जगह पिताजी को सबसे ज्यादा चोटें लगीं । नेशनल रेस्टोरेंट नाम के एक सस्ते से ढाबे के सामने की खाली जगह पर पिताजी घिर गए थे । इतवारी कोलोनी से लड़कों का जो झुंड उनके पीछे पड़ गया था, उसमें कुछ बड़ी उम्र के लड़के भी शामिल हो गए थे । नेशनल रेस्टोरेंट में काम करनेवाले नौकर सत्ते का कहना था कि पिताजी ने गलती यह की थी कि एक बार उन्होने गुस्से में आकर भीड़ पर ढेले मारने शुरू कर दिए थे । शायद उन्हीं का एक बड़ा सा ढेला सात-आठ साल के लड़के विकी अग्रवाल को लग गया था जिसे बाद में कई टाँके लगे थे । सत्ते का कहना था कि इसके बाद झुंड ज्यादा खतरनाक हो गया था । वे हल्ला मचा रहे थे और हर तरफ से पिताजी पर पत्थर मार रहे थे । ढाबे के मालिक सरदार सतनाम सिंह ने बताया कि उस वक्त पिताजी के जिस्म पर सिर्फ पट्टेवाली एक चड्डी थी । दुबले शरीर की हड्डियाँ और छाती के सफेद बाल दिख रहे थे । पेट पिचका हुआ था । वे धूल और मिट्टी में लिथड़े हुए थे, सिर के सफेद बाल बिखर गए थे, दाहिनी आँख के ऊपर से और निचले होंठ से खून बह रहा था । सतनाम सिंह ने दुख और पछतावे के साथ कहा-"मेरे को क्या मालूम था कि यह आदमी सीधा-सादा, इज्जतदार, साख-रसूख का इंसान है और नसीब के फेर में इसकी ये हालत हो गई है ।" वैसे ढाबे में कप-प्लेट धोनेवाले नौकर हरी का कहना था कि बीच-बीच में पिताजी भीड़ को अंड-बंड गालियाँ दे-देकर ढेले मारने लगते थे-'आओ ससुरो...आओ.... एक-एक को मार डालूँगा ....वालो तुम्हारी ....की....' लेकिन मुझे संदेह है कि पिताजी ने ऐसी कोई गाली दी होगी । हमने कभी भी उन्हें गाली देते नहीं सुना था ।

मैं पूरे विश्वास के साथ कह सकता हूँ, क्योंकि पिताजी को मैं बहुत अच्छी तरह से जानता हूँ कि, इस समय तक, उन्हें कई बार लगा होगा कि उनके साथ जो कुछ हो रहा है, वह वास्तविकता नहीं है, एक सपना है । पिताजी को ये सारी घटनाएँ ऊल-जलूल, उटपटांग और बेमतलब लगी होंगी । वे इस सब

पर अविश्वास करने लगे होंगे । उन्होंने सोचा होगा कि यह सब क्या बकवास है ? वे तो गाँव से शहर आए ही नहीं हैं, उन्हें किसी तिरिछ ने नहीं काटा है । बल्कि तिरिछ तो होता ही नहीं है, एक मनगढ़ंत और अंधविश्वास है.....और धतूरे का काढ़ा पीने की बात तो हास्यापद है, वह भी एक तेली के खेत में उसका पौधा खोजकर । उन्होंने सोचा होगा और पाया होगा कि भला उन पर कोई मुकदमा क्यों चलेगा ? उन्हें अदालत में जाने की क्या जरूरत है ?

मैं जानता हूँ कि सुरंग जैसा लंबा, सम्मोहक लेकिन डरावना सपना जैसा मुझे आता था, पिताजी को भी आता रहा होगा । मेरी और उनकी बहुत सी बातें बिलकुल मिलती-जुलती थीं । मुझे लगता है कि इस समय तक पिताजी पूरी तरह से मान चुके होंगे कि यह जो कुछ हो रहा है सब झूठ और अवास्तविक है । इसीलिए वे बार-बार उस सपने से जागने की कोशिश करते रहे होंगे । अगर वे बीच-बीच में जोर-जोर से कुछ बोलने लगते थे, या शायद गालियाँ बकने लगते थे, तो इसी कठिन कोशिश में कि वे उस आवाज के सहारे उस दु:स्वप्न से बाहर निकल आएँ । नेशनल रेस्टोरेंट के नौकरों और मालिक सरदार सतनाम सिंह ने जैसा बताया था उसके अनुसार उस ज़गह पर पिताजी को बहुत चोटें आई थीं । उनकी कनपटी, माथे, पीठ और शरीर के दूसरे हिस्सों पर कई ईंट और ढेले आकर लग गए थे । सड़क का ठेका लेनेवाले ठेकेदार अरोड़ा के बीस-बाइस साल के लड़के संजू ने उन्हें दो-तीन बार लोहे की रॉड से भी मारा था । सत्ते का तो कहना था कि इतनी चोटों से कोई भी आदमी मर सकता था ।

मुझे यह सोचकर एक अजीब सी राहत मिलती है और मेरी फँसती हुई साँसें फिर से ठीक हो जाती हैं कि उस समय पिताजी को कोई दर्द महसूस नहीं होता रहा होगा; क्योंकि वे अच्छी तरह से, पूरी तार्किकता और गहराई के साथ विश्वास करने लग गए होंगे कि यह सब सपना है और जैसे ही वे जागेंगे, सब ठीक हो जाएगा या नीचे फर्श पर सोते हुए मैं और छोटी बहन दिख जाएँगे....या गौरैयों का झुंड.... हो सकता है कि उन्हें बीच-बीच में अपने इस अजीबोगरीब सपने पर हँसी भी आई हो ।

अगर पिताजी ने गुस्से में लड़कों की तरफ खुद भी ढेले मारने शुरू कर दिए तो इसके पीछे पहली वजह तो यही थी कि उन्हें यह बहुत अच्छी तरह से पता था कि ये ढेले सपने के भीतर जा रहे हैं और इससे किसी को कोई चोट नहीं आएगी । यह भी हो सकता है कि पूरी ताकत से ढेला मारकर वे उत्सुकता और बेचैनी से यह इंतजार करते रहे हों कि जैसे ही वह जाकर किसी लड़के के सिर से टकराएगा, उसका माथा नष्ट होगा और एक ही झटके में इस दु:स्वप्न के टुकड़े-टुकड़े बिखर जाएँगे और चारों ओर से वास्तविक संसार की बेतहाशा रोशनी अंदर आने लगेगी । उनका जोर-जोर से चीखना भी दरअसल गुस्से के कारण नहीं था, वे असल में मुझे, छोटी बहन को, माँ को या किसी को भी पुकार रहे थे कि अगर वे अपने आप इस सपने में जाग पाने में सफल न भी हो पाएँ, तब भी कोई आकर उन्हें जगा दे ।

एक सबसे बड़ी विडंबना भी इसी बीच हुई । हमारे गाँव की ग्राम पंचायत के सरपंच और पिताजी के बचपन के पुराने दोस्त पंडित कंधई राम तिवारी लगभग साढ़े तीन बजे नेशनल रेस्टोरेंट के सामने, सड़क से गुजरे थे । वे रिक्शे पर थे । सामने इकट्ठी भीड़ को देखा और उन्हें यह पता भी चल गया कि वहाँ पर किसी आदमी को मारा जा रहा है । उनकी यह इच्छा भी हुई कि वहाँ जाकर देखें कि आखिर मामला क्या है । उन्होंने रिक्शा रुकवा भी लिया । लेकिन उनके पूछने पर किसी ने कहा कि कोई पाकिस्तानी

जासूस पकड़ा गया है जो पानी की टंकी में जहर डालने जा रहा था, उसे ही लोग मार रहे हैं । ठीक इसी समय पंडित कंधई राम को गाँव जानेवाली बस आती हुई दिखी और उन्होंने रिक्शेवाले से अगले चौराहे तक जल्दी-जल्दी रिक्शा बढ़ाने के लिए कहा । गाँव जानेवाली यह आखिरी बस थी । अगर उस बस के आने में तीन-चार मिनट की भी देरी हो जाती तो वे निश्चित ही वहाँ जाकर पिताजी को देखते और उन्हें पहचान लेते । राज्य परिवहन की वह बस हमेशा आधा-पौन घंटा लेट रहा करती थी, लेकिन उस दिन, संयोग से, वह बिलकुल सही समय पर आ रही थी ।

सतनाम सिंह का कहना था कि वह भीड़ नेशनल रेस्टोरेंट के सामने से तब हटी और लोग तितर-बितर हुए जब बड़ी देर तक पिताजी जमीन से उठे ही नहीं । ईंट का एक बड़ा-सा ढेला उनकी कनपटी पर आकर लगा था । उनके मुँह से खून आना शुरू हो गया था । सिर में भी चोटें थीं । सतनाम ने बताया कि जब पिताजी बहुत देर तक नहीं हिले-डुले तो लड़कों के झुंड में से किसी ने कहा कि लगता है यह मर गया । जब भीड़ छँटने के दस-पंद्रह मिनट बाद भी पिताजी नहीं हिले-डुले तो सतनाम सिंह ने सत्ते से कहा था कि वह उनके मुँह में पानी के छींटे मार कर देखे कि वे सिर्फ बेहोश हैं तो हो सकता है कि उठ जाएँ । लेकिन सत्ते पुलिस की वजह से डर रहा था । बाद में सतनाम सिंह ने खुद ही एक बाल्टी पानी उनके ऊपर डाला था । दूर से पानी डालने के कारण जमीन की मिट्टी गीली होकर पिताजी के शरीर से लिथड़ गई थी ।

सरदार सतनाम सिंह और सत्ते दोनों का कहना था कि लगभग पाँच बजे तक पिताजी उसी जगह पड़े हुए थे । तब तक पुलिस नहीं आई थी । फिर सतनाम सिंह ने सोचा कि कहीं उसे पंचनामा और गवाही वगैरह में न फँसना पड़ जाए इसलिए उसने ढाबा बंद कर दिया था और डिलाइट टाकीज में 'आन मिलो सजना' फिल्म देखने चला गया था ।

उस समय लगभग छह बजे थे जब सिविल लाइंस की सड़क की पटरियों पर एक कतार में बनी मोचियों की दुकानों में से एक मोची गनेशवा की गुमटी में पिताजी ने अपना सिर घुसेड़ा । उस समय तक उनके शरीर पर चड्डी भी नहीं रह गई थी, वे घुटनों के बल किसी चौपाये की तरह रेंग रहे थे । शरीर पर कालिख और कीचड़ लगी हुई थी और जगह-जगह चोटें थीं ।

गनेशवा हमारे गाँव के तालाब के पारवाले टोले का मोची है । उसने बताया कि मैं बहुत डर गया था और मास्टर साहब को पहचान ही नहीं पाया । उनका चेहरा डरावना हो गया था और चिन्हाई में नहीं आता था । मैं डर कर गुमटी से बाहर निकल आया और शोर मचाने लगा । दूसरे मोचियों के अलावा वहाँ कुछ और लोग भी इकट्ठा हो गए थे । लोगों ने जब गनेशवा की गुमटी के भीतर झाँका तो गुमटी के अंदर, उसके सबसे अंतरे-कोने में, टूटे-फूटे जूतों, चमड़ों के टुकड़ों, रबर और चिथड़ों के बीच पिताजी दुबके हुए थे । उनकी साँसें थोड़ी-बहुत चल रही थीं । उन्हें वहाँ से खींच कर, बाहर, पटरी पर निकाला गया । तभी गनेशवा ने उन्हें पहचान लिया । गनेशवा का कहना था कि उसने पिताजी के कान में कुछ आवाजें भी लगाईं लेकिन वे कुछ बोल नहीं पा रहे थे । बहुत देर बाद उन्होंने 'राम स्वारथ प्रसाद....' और 'बकेली' जैसा कुछ कहा था । फिर चुप हो गए थे ।

पिताजी की मृत्यु सवा छह बजे के आसपास हुई थी । तारीख थी 17 मई, 1972 । चौबीस घंटे

पहले लगभग इसी वक्त उन्हें जंगल में तिरिछ ने काटा था । चौबीस घंटे पहले क्या पिताजी इन घटनाओं और इस मृत्यु का अनुमान कर सकते थे ?

पिताजी का शव शहर के मुर्दाघर में पुलिस ने रखवा दिया था । पोस्टमार्टम में पता चला था कि उनकी हड्डियों में कई जगह फ्रैक्चर था, दाईं आँख पूरी तरह फूट चुकी थी, कॉलर बोन टूटा हुआ था । उनकी मृत्यु मानसिक सदमे और अधिक रक्तस्राव के कारण हुई थी । रिपोर्ट के अनुसार उनका अमाशय खाली था, पेट में कुछ नहीं था । इसका मतलब यही हुआ कि धतूरे के बीजों का काढ़ा उल्टियों द्वारा पहले ही निकल चुका था ।

हालाँकि थानू कहता है कि अब तो यह तय हो गया कि तिरिछ के जहर से कोई नहीं बच सकता । ठीक चौबीस घंटे बाद उसने अपना करिश्मा दिखाया और पिताजी की मृत्यु हुई । पंडित राम औतार भी यही कहते हैं । हो सकता है कि पंडित राम औतार इसलिए ऐसा कहते हों कि वे खुद को विश्वास दिलाना चाहते हों कि धतूरे के काढ़े का पिताजी की मृत्यु से कोई संबंध नहीं था ।

मैं सोचता हूँ, अंदाजा लगाने की कोशिश करता हूँ कि शायद अंत में, जब गनेशवा ने अपनी गुमटी के बाहर, पिताजी के कान में आवाज दी होगी तो पिताजी सपने से जाग गए होंगे । उन्होंने मुझे, माँ को और छोटी बहन को देखा होगा-फिर वे दातून लेकर नदी की तरफ चले गए होंगे । नदी के ठंढे पानी से उन्होंने अपना चेहरा धोया होगा, कुल्ला किया होगा और इस लंबे दु:स्वप्न को भूल गए होंगे । उन्होंने अदालत में जाने के बारे में सोचा होगा । हम लोगों के मकान की चिंता ने उन्हें परेशान किया होगा ।

लेकिन मैं अपने सपने के बारे में बताना चाहता हूँ, जो मुझे अक्सर आता है । वह यों है–कि मैं खेतों की मेंड़, गाँव की पगडंडी से होता हुआ जंगल में पहुँच गया हूँ । मैं रक्सा नाला, कीकर के पेड़ को देखता हूँ । वह भूरी चट्टान वहाँ उसी जगह है, जो सारी बारिश नाले के पानी में डूबी रहती है । मैं देखता हूँ कि तिरिछ की लाश उसके ऊपर पड़ी हुई है । मुझे एक बेतहाशा खुशी अपने घेरे में ले लेती है । आखिर वह मारा गया । मैं पत्थर लेकर तिरिछ को कुचलने लगता हूँ, जोर-जोर से उसे मारता हूँ । मेरे पास थानू मिट्टी का तेल और माचिस लिए खड़ा है । तभी, अचानक ही, मैं पाता हूँ कि मैं उस चट्टान पर नहीं हूँ । थानू भी वहाँ नहीं है, वहाँ कोई जंगल नहीं है बल्कि मैं दरअसल शहर में हूँ । मेरे कपड़े बहुत ही मैले, फटे और चिथड़ों जैसे हो गए हैं । मेरे गालों की हड्डियाँ निकली हैं । बाल बिखरे हैं । मुझे प्यास लगी है और मैं बोलने की कोशिश करता हूँ । शायद मैं बकेली, अपने घर जाने का रास्ता पूछना चाहता हूँ और तभी अचानक चारों ओर शोर उठता है....घंटियाँ बजने लगती हैं.....हजारों-हजारों घंटियाँ.... मैं भागता हूँ ।

मैं भागता हूँ.......मेरा पूरा शरीर बेदम होने लगता है, फेफड़े फूल जाते हैं । मैं पास-पास कदम रखकर अचानक लंबी-लंबी छलाँगें लगाता हूँ, उड़ने की कोशिश करता हूँ । लेकिन भीड़ लगता है मेरे पास पहुँचने वाली होती है । एक अजीब सी गर्म और भारी हवा मुझे सुन्न कर देती है । अपनी हत्या की साँसें मुझे छूने लगती हैं.....और आखिरकार वह पल आ जाता है, जब मेरे जीवन का अंत होने वाला होता है...

मैं रोता हूँ....भागने की कोशिश करता हूँ । मेरा पूरा शरीर नींद में ही पसीने में डूब जाता है । मैं जोर-जोर से बोल कर जागने की कोशिश करता हूँ....मैं विश्वास करना चाहता हूँ कि यह सब सपना है....

और अभी आँख खोलते ही सब ठीक हो जाएगा....में सपने के भीतर अपनी आँखें फाड़ कर देखता हूँ...दूर तक....लेकिन वह पल आखिर आ ही जाता है....

माँ बाहर से मुझे देखती है । मेरा माथा सहलाकर वह मुझे रजाई से ढाँप देती है और मैं वहाँ अकेला छोड़ दिया जाता हूँ । अपनी मृत्यु से बचने की कोशिश में जूझता, बेदम होता, रोता, चीखता और भागता ।

माँ कहती है मुझे अभी भी नींद में बड़बड़ाने और चीखने की आदत है । लेकिन मैं पूछना चाहता हूँ और यही सवाल मुझे हमेशा परेशान करता है कि मुझे आखिरकार अब तिरिछ का सपना क्यों नहीं आता ?

❑❑❑

अभ्यास

पाठ के साथ

1. लेखक के पिता के चरित्र का वर्णन अपने शब्दों में करें ।
2. तिरिछ क्या है ? कहानी में यह किसका प्रतीक है ?
3. 'अगर तिरिछ को देखो तो उससे कभी आँख मत मिलाओ । आँख मिलते ही वह आदमी की गंध पहचान लेता है और फिर पीछे लग जाता है । फिर तो आदमी चाहे पूरी पृथ्वी का चक्कर लगा ले, तिरिछ पीछे-पीछे आता है ।' क्या यहाँ तिरिछ केवल जानवर भर है ? यदि नहीं तो उससे आँख क्यों नहीं मिलाना चाहिए ?
4. तिरिछ लेखक के सपने में आता था और वह इतनी परिचित आँखों से देखता था कि लेखक अपने आपको रोक नहीं पाता था । यहाँ परिचित आँखों से क्या आशय है ?
5. व्याख्या करें –
   (क) वैसे, धीरे-धीरे मैंने अनुभवों से यह जान लिया था कि आवाज ही ऐसे मौके पर मेरा सबसे बड़ा अस्त्र है ।
   (ख) जैसे जब मेरी फीस की बात आई थी, उस समय हमारे पास का आखिरी गिलास भी गुम हो गया था और सब लोग लोटे में पानी पीते थे ।
   (ग) आश्चर्य था कि इतने लंबे अर्से से उसके अड्डे को इतनी अच्छी तरह से जानने के बावजूद कभी दिन में आकर मैंने उसे मारने की कोई कोशिश नहीं की थी ।
   (घ) मुझे यह सोचकर एक अजीब सी राहत मिलती है और मेरी फँसती हुई साँसें फिर से ठीक हो जाती हैं कि उस समय पिताजी को कोई दर्द महसूस नहीं होता रहा होगा ।
6. तिरिछ को जलाने गए लेखक को पूरा जंगल परिचित लगता है, क्यों ?
7. 'इस घटना का संबंध पिताजी से है । मेरे सपने से है और शहर से भी है । शहर के प्रति जो एक जन्मजात भय होता है, उससे भी है ।' यह भय क्यों है ?

8. कहानी में वर्णित 'शहर' के चरित्र से आप कितना सहमत हैं ?
9. लेखक के पिता के साथ एक दिक्कत यह भी थी कि गाँव या जंगल की पगडंडियाँ तो उन्हें याद रहती थीं, शहर की सड़कों को वे भूल जाते थे । इसके पीछे क्या कारण हो सकता है ? आप क्या सोचते हैं ? लिखें ।
10. स्टेट बैंक के कैशियर अग्निहोत्री, नेपाली चौकीदार थापा, असिस्टेंट ब्रांच मैनेजर मेहता, थाने के एस० एच० ओ० राघवेंद्र प्रताप सिंह के चरित्र का परिचय अपने शब्दों में दीजिए ।
11. लेखक के पिता अपना परिचय हमेशा 'राम स्वारथ प्रसाद.....एक्स स्कूल हेडमास्टर.....एंड विलेज हेड ऑफ बकेली' के रूप में देते थे, ऐसा क्यों ? स्कूल और गाँव के बिना वे अपना परिचय क्यों नहीं देते ?
12. 'हालाँकि थानू कहता है कि अब तो यह तय हो गया कि तिरिछ के जहर से कोई नहीं बच सकता । ठीक चौबीस घंटे बाद उसने अपना करिश्मा दिखाया और पिताजी की मृत्यु हई ।' इस अवतरण का अभिप्राय स्पष्ट करें ।
13. लेखक को अब तिरिछ का सपना नहीं आता, क्यों ?

पाठ के आस-पास

1. 'तिरिछ' कहानी में जादुई यथार्थवाद है । पाठ-परिचय में जादुई यथार्थवाद का परिचय दिया गया है, अपने शिक्षक से इस संबंध में विशेष जानकारी प्राप्त करें ।
2. 'टेपचू', 'पॉल गोमरा का स्कूटर' जैसी कहानियों में भी जादुई यथार्थवाद है । हिंदी के ऐसे अन्य कथाकारों और उनकी कहानियों के नाम मालूम करें जिनमें जादुई यथार्थवाद का प्रयोग हुआ है ।
3. स्वप्न क्या है ? क्या इसका संबंध हमारे दैनिक जीवन से है ? आपके सपनों में कैसी चीजें आती हैं ? डायरी में अपने किसी सपने को लिखें ।

भाषा की बात

1. निम्नलिखित पदों में कौन सा समास है –
   जन्मजात, भारी-भरकम, संवाददाता, बीचो-बीच, नीलकंठ, चौराहा, टेढ़ा-मेढ़ा, इधर-उधर, चुंगीनाका
2. कहानी से व्यक्तिवाचक संज्ञाओं को चुनें ।
3. कहानी के शिल्प पर अपने शिक्षक से चर्चा करें और एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखें ।
4. नीचे लिखे वाक्यों से संज्ञा एवं सर्वनाम चुनें –
   (क) लेकिन बहुत जल्द हमें वह नाला मिल गया ।
   (ख) तिरिछ उसमें जल रहा था ।
   (ग) मेरा अनुमान है कि उस समय पिताजी को बहुत प्यास लगी होगी ।
   (घ) उसने घंटी भी बजा दी ।

शब्द निधि

जोखिम : खतरा
बुर्जे : किले के परकोटों पर लगनेवाले मंडप
अभेद्य : जिसे भेदा न जा सके
परकोटा : किले के चारों ओर की ऊँची दीवारें
खौफनाक : भयानक
यातनादायक : यातना देनेवाला, तकलीफदेह
भयाक्रांत : भयभीत
घाघ : भीतर ही भीतर सब कुछ समझने वाला, चतुर